International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 224-226

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 224-226
© 2017
www.anantaajournal.com
Received: 28-05-2017
Accepted: 30-06-2017

सोमेन्द्र सिंह
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Correspondence
सोमेन्द्र सिंह
शोधार्थी, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

बुद्ध विजयकाव्यम् में दार्शनिक पक्ष एक चिन्तन

सोमेन्द्र सिंह

प्रस्तावना

भारतीय समाज के भव्य विचारों का संस्कृत साहित्य रूचिर दर्पण है। संस्कृत भाषा में निबद्ध विशाल तथा बहुमुखी साहित्य का इतिहास अपने समस्त वैभव तथा विभूति के प्रदर्शन के लिए अनेक खण्डों में अपनी अभिव्यक्ति चाहता है। संस्कृत साहित्य विश्व का सबसे समृद्धशाली साहित्य हैं साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज के रूप–रंग, वृद्धि ह्रास उत्थान, पतन, समृद्धि दुरावस्था के निश्चित ज्ञान का साधन तत्कालीन साहित्य होता है। इसी प्रकार साहित्य संस्कृति का प्रधान वाहन होता है। संस्कृति की आत्मा साहित्य के भीतर से अपनी मधुर झांकी सदा प्रदर्शित करती है।

संस्कृति के उचित प्रचार एवं प्रसार का सर्वश्रेष्ठ साधन साहित्य ही है। संस्कृति का मूल स्तर यदि भौतिकवाद के ऊपर आश्रित रहता है तो वहां का साहित्य आध्यात्मिकता से अनुप्राणित नही हो सकता और यदि संस्कृति के भीतर आध्यात्मिकता की भव्य भावनाएं हिलोरे मारती रहती है। तो उसमें देश तथा जाति का साहित्य भी आध्यात्मिकता से अनुप्राणित हुए बिना नही रह सकता।

साहित्य सामाजिक भावना और सामाजिक विचार की विशुद्ध अभिव्यक्ति होने के कारण यदि समाज का मुकुर है तो सांस्कृतिक आचार तथा विचार के विपुल प्रचारक तथा प्रसारक होने के हेतु, संस्कृति के संदेश को जनता के हृदय तक पहुंचाने के कारण संस्कृति का वाहन होता है। संस्कृत भाषा में रचित साहित्य अपने आप में महत्वपूर्ण समाज उपयोगी है। उसी श्रंखला में श्रीयुत् शान्ति भिक्षु शास्त्री द्वारा रचित बुद्धविजयकाव्यम् महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। ''बुद्धविजयकाव्यम् में दार्शनिक पक्ष एक चिन्तन'' महत्वपूर्ण विषय है। ''बुद्धविजयकाव्यम्'' महाकाव्य के लक्षणों से अभिलक्षित है जैसा की शास्त्रकार ने महाकाव्य का लक्षण किया है।

सर्गबन्धों महाकाव्यं त्रैको नायकःशुराः।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्त गुणावन्तिः।।

यह काव्य सौ सर्गो में विभक्त है। इसमें महात्मा बुद्ध की शिक्षाऐं उनके आचार–विचार एवं मान्यताओं का विशद वर्णन हैं बुद्धविजय कात्यम् में दार्शनिक विचारधारा का अविरल प्रवाह जनमास को अभिसिंचित करता है। बुद्धविजयकाव्यम् वर्ष 1977 में साहित्य अकादमी से पुरस्कृत है।

प्रस्तुत शोधपत्र में बुद्धविजयकाव्यम् में वर्णित बौद्धदर्शन पर चिन्तन किया गया है।

दर्शन

दर्शन शब्द संस्कृत की ''दृश'' धातु से बना है जिसका अर्थ ''देखना'' है। ''दृश'' धातु में ''ल्युट'' प्रत्यय लगाने से ''दर्शन'' शब्द बना है। अतएव दर्शन का अर्थ है ''जिससे देखा जाए। उपनिषदों में दर्शन का यही अर्थ है। सत्य का दर्शन जिस बात के द्वारा किया जाए वही दर्शन है। अंग्रेजी में दर्शन को ''फिलासपी'' कहते है। फिलासपी शब्द ग्रीक भाषा का है। इसमें दो भिन्न शब्द है – एक ''फिलास (Philos) है। जिसका अर्थ है ''प्रेम'' और दूसरा शब्द है ''सोफिया'' (Sophi) जिसका अर्थ ''विद्या या ज्ञान है। इस प्रकार फिलासफी शब्द का अर्थ है ''ज्ञान से प्रेम'' ग्रीक दर्शन शास्त्री – प्लेटो ने दर्शन को इसी रूप में स्वीकार किया है। सीक्रेटीज का कहना है कि जो ज्ञान की प्यास रखते है वे सब दार्शनिक है।

1. प्लेटों के अनुसार – ''पदार्थो का यथार्थ स्वरूप का ज्ञान ही दर्शन है।''
2. अरस्तु के अनुसार – ''दर्शन ऐसा विज्ञान है जो परम–तत्व में यथार्थ स्वरूप की जांच करता है।
3. डा0 राधाकृष्णन के अनुसार – सत्य के स्वरूप का तार्किक विवेचन ही दर्शन है।
4. फिस्टे – दर्शन ज्ञान का विज्ञान है।

अपनी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए मनुष्य जो भी चिन्तन करता है उसी के द्वारा दर्शन का जन्म होता है। प्लेटों का कथन है कि ''दर्शन का जन्म कुतूहल या जिज्ञासा से होता है'' प्रसिद्ध दार्शनिक देकार्त के अनुसार ''संदेह भावना दर्शन को जन्म देती हैं कुछ विचारकों के अनुसार मानसिक अशान्ति से दर्शन का जन्म होता है।

एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि जिज्ञासा विचार को जन्म देती है। जो कालान्तर में दर्शन का रूप धारण कर लेता है। मनुष्य के युक्तिपूर्वक तत्वज्ञान प्राप्त करने के प्रयत्न को ही दर्शन कहते हैं। मनुष्य क्या है ? उसके जीवन का क्या लक्ष्य है ? यह संसार क्या है ? इसका कोई स्त्रष्टा भी है ? मनुष्य को किस प्रकार जीवन जीना चाहिए ? ऐसे अनेक प्रश्न है। जिन्हें प्रायः अनेक देशों के मनुष्य सभ्यता के प्रारम्भ से ही सुलझाने की चेष्ठा करते आ रहे हैं। भारतीय दर्शन के अनुसार हमें तत्व का साक्षात्कार हो सकता है। इसी को सम्यक् दर्शन या दर्शन कहते हैं।

महर्षि मनु का कथन है :

सम्यक् दर्शन सम्पनः कर्मभिने निबद्धयते।
दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपाद्यते ।।मनुसंहिता–6–74

अर्थात् – सम्यक् दर्शन प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बंधन में डाल नही सकते, जिसको यह सम्यक दृष्टि नहीं है, वे ही संसार के मोह जाल में फस जाते हैं।

दर्शन की शाखाऐं –

प्राचीन वर्गीकरण के अनुसार भारतीय दर्शन दो भागों में बांटे गए हैं – आस्तिक तथा नास्तिक/मीमांसा, वेदांत, सांख्य, योग, न्याय तथा विशेषिक आस्तिक दर्शन कहे जाते हैं। नास्तिक दर्शन तीन है चाबकि, बौद्ध तथा जैन/प्राचीन दार्शनिक साहित्य के अनुसार दार्शनिक का अर्थ ''वेदानुयायी'' तथा नास्तिक का अर्थ ''वेद विरोधी'' है ''नास्तिकों वेदनिन्दकः''।

बौद्ध दर्शन

महात्मा बुद्ध भारत के महान लोकनायक थे। उनका मध्यम मार्ग आधारित बौद्धधर्म विश्व के बहुत से देशों का महत्वपूर्ण धर्म माना गया। उनकी लौकिक भाषा की मध्यममर्गीय शिक्षाओं ने विश्व के लोगों को अत्याधिक प्रभावित किया है। बुद्ध मनुष्य के रोग, जरा, मृत्यु तथा अन्यान्य दुःखों को देखकर अत्यंत पीड़ित हुए थे। जीव के दुःखों के कारण को समझने तथा उनको दूर करने के उपायों को जानने के लिए उन्होंने वर्षो तक अध्ययन, तय और चिंतन किया। अंत में उन्होने बोधि या ज्ञान प्राप्त किया।

बुद्धविजयकाव्यम् में दार्शनिक पक्ष

बुद्धविजयकाव्यम् में महात्मा बुद्ध के जीवन चरित के साथ ही बौद्ध दर्शन के सभी पक्षों की झलक दिखलायी पड़ती है। जैसे कि बौद्धदर्शन के मूल सिद्धान्त निम्न प्रकार से है :–

1. त्रिपिटक, 2. चार आर्य सत्य, 3. अष्टांगिक मार्ग
4. चार संप्रदायः क. माध्यमिक मत या शून्यवाद
ख. योगाचार या विज्ञानवाद
ग. सौत्रतिक मत
घ. वैभाषिक मत

5. धार्मिक प्रश्नों के आधार पर दो मत
क. हीनयान
ख. महायान

6. उपदेशों के अंतर्निहित दार्शनिक विचार
क. प्रतीत्य समुत्पाद
ख. कर्म
ग. क्षणिकवाद
घ. आत्मा का अनस्तित्व (अनन्तवाद)

अहिंसा

बुद्धविजयकाव्यम् के पूर्वार्द्ध के प्रथम पर्व के मंगलाचरण सर्ग के प्रथम श्लोक में ही अहिंसा का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि

श्रीघनो भगवान् बुद्धो महाप्रज्ञाकृपानिधिः।
अहिंसा धर्मधातास्मिंल्लोके विजयतेतराम् ।।1–1।।
अस्मिन् कलियुगे क्रूरे हिंसयोन्मत्त दुर्जने।
पाठ्यन्तमहिंसायाः पाठं तं नौनि गौतमम्।।1–26।।

श्री भगवान बुद्ध जो महाप्रज्ञा के निधि है और अंहिसा धर्म के ध्वज वाहक हैं उनकी जय हो तथा कलियुग में क्रूर हिंसक दुर्जन मानव को गौतम ने अहिंसा का पाठ पढ़ाया।

चार आर्य सत्य ''दुःख निरोध''

चार आर्य सत्य (1) दुःख है (2) दुःख का नाश (3) दुःख का अंत है (4) दुःख दूर करने का उपाय है। ''दुःख है'' इस सत्य को किसी न किसी रूप में सभी मानते हैं। किन्तु बुद्धदेव की सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा यह अनुभव हुआ कि दुःख केवल विशेष अवस्थाओं में ही नहीं बल्कि संसार के सभी जीवों की सभी अवस्थाओं में विद्यमान है जो वस्तु या जो अनुभूति सुखद मालूम पड़ती है वह वास्तव में दुःखद ही है।

''अनाथ जनसानाथ्य संपादन परायणः।
सर्वदुःखनिरोधार्थ सर्वक्लेश विनाशनः।।47/24।।
''सायाहन्युपयाताना धर्मचर्चा मिलाषिणाम्।
तर्पयन् हृदयं धर्मकथया न्यवसज्जिनः।।47/25।।

अनाथ जन ''अज्ञानी पुरूष'' जब ज्ञान प्राप्त कर लेता है तब सब दुःखों का निरोध हो जाता है। धर्म चर्चा का विषय ही ज्ञान की प्राप्ति है जो मानव के हृदय को तृप्त करती है।

यदि हमें विषयों का ज्ञान सही प्रकार से हो जाए और हम समझें कि वे कितने क्षणिक और दुःखद है तो उनके प्रति हमारे तृष्णा ही न जगे।

सम्यक दृष्टि – समान दृष्टि की भावना के साथ संसार की वस्तुओं को देखना और क्षणभंगुर समझना कामिनी, कंचन, शक्ति, ऐश्वर्य आदि भोतिक प्रलोभन के विषय में न पड़ना

''कामिनी कांचना शक्ति विरतान् वन्दते न कः।
वन्देऽहमपि तान् साधून् वीतसर्व परिगृहान्।।2/30।।

''मोक्ष'' – मोक्ष निर्वाण की प्राप्ति जीवनकाल में भी हो सकती है। राग–द्वेषों पर विजय पाकर शुद्ध आचरण या शील के साथ आर्य–सत्यों का निरंतर ध्यान करते हुए यदि कोई मनुष्य समाधि के द्वारा प्रज्ञा प्राप्त कर लेता है तो उसका चित्त लोभ, मोह राग, द्वेष से मुक्त हो जाता है। यथा

''मुक्तिमार्ग दिशन्तो ये लोकतृष्णाविवर्धनाः।
संपर्केपाप्यहं तेषा न लिप्तः स्यां विमुक्तधीः।।4/29।।
हितस्य येऽत्र धातारो ज्ञानस्य च सुखस्य च।
शरणं ते भवन्त्वत्त ह्मषितप्रोषितस्य में।।4/30।।
''धर्मार्थकाम मोक्षाणां साधुमार्गोपदेशकाः।
पान्तु सर्वानुपायेन कल्याणसुहृदो जनान्।।4/31।।

आर्यसत्य चार

अरियांन सच्चानि अयिसच्चानी बुद्ध आर्यो के सत्य है। इन आर्यसत्यों का बोध आर्यों को ही हो सकता है। आर्य अर्थात् वस्तुभूत सत्यों को आर्यसत्य कहते है।

इन आर्य सत्यों को समस्त कुशल धर्मों का मूल भी कहा जाता है। जितने भी कुशल धर्म है वे सभी आर्यसत्य में निहित है। चार आर्यसत्य महात्मा बुद्ध के अनुभाव और अलौकिक दृष्टि पर आधारित हैं। इन चार आर्यसत्यों को पूरी तरह से समझ लेने पर मनुष्य दुःखों से मुक्त हो सकता है। इन चार आर्यसत्यों को पहिये की चार धुरियों के समान माना गया है जिन पर पूर्ण धर्मचक्र का अस्तित्व निर्भर है। भगवान् बुद्ध के उपदेशों का सारांश उनके चार आर्यसत्यों में निहित है। इन्हीं सत्यों के सम्यक्ज्ञान के कारण तथागत को सम्बोधि प्राप्त हुई थी। आर्यसत्य का दर्शन वस्तुतः उस साधक को ही हो सकता है जिसका चित आस्रव मुक्त हो। जब साधक को चार आर्यसत्यों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो वह निर्वाण को प्राप्त करता है। ये चार आर्यसत्य है। – दुःख, दुःखसमुदय, दुःखनिरोध तथा दुःख निरोधगामिनीप्रतिपदा। जिस पकार चिकित्साशास्त्र में रोग है, रोग से विमुक्ति की दवा है उसी प्रकार दर्शन शास्त्र के अनुसार संसार में दुःख, दुःख समुदाय, दुःखनिरोध तथा दुःख निरोधगामिनीप्रतिपदा – ये चार आर्य सत्य हैं। जिस प्रकार वैद्य अपनी दवा के प्रयोग से रोगी के रोग का नाश करता है उसी प्रकार तत्व ज्ञानी भी उपायों का द्वारा संसार के दुःखों को नष्ट कर देता है।

भगवान् बुद्ध उसे ही आर्य कहते हैं जो दूसरों के दुःख को दूर करने का प्रयास करता हैं[2]

अष्टांगिक मार्ग

बौद्धों के आठ अंगों से युक्त मार्ग का नाम अष्टांगिक मार्ग या मध्यम प्रतिपदा है। अष्टांगिक मार्ग बौद्ध धर्म का आधारभूत स्तम्भ है। भगवान् बुद्ध ने अष्टांगिक मार्ग को श्रेष्ठ धर्म कहा है। आर्य अष्टांगिक मार्ग को ब्रह्मयान तथा धम्मयान कहते है। इस लोकोत्तर ब्रह्मयान को अपना बनाकर धीर पुरूष की विजय सुनिश्चित है। यह एक धम्मयान है जिस पर चढ़कर साधक बहुजनसुखाय सक्रिय रहता है। यह मध्यम मार्ग शान्ति, दिव्य ज्ञान, सम्बोधि तथा निर्वाण की ओर ले जाने वाला है। भगवान् बुद्ध ने कहा भी है सब दुःखों को दूर करने की जिनकी चाह है उन्हें अपने कर्त्तव्य का अनुष्ठान करते हुए मध्यम मार्ग पर ही चलना चाहिए। आर्य अष्टांगिक मार्ग ही दुःख निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है।

प्रतीत्यसमुत्पाद

प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धान्त बौद्ध – दर्शन की आधारशिला है। यह बुद्ध के दर्शन को समझने की कुंजी है। प्रति का अर्थ है प्राप्ति, इण् धातु गत्यर्थक है। इसलिए प्रति – इ का अर्थ है प्राप्ति। पद् धातु सत्तार्थक है। सम् उद्उपसर्ग पूर्वक इसका अर्थ प्रादुर्भाव है। प्रत्यय से उत्पाद का अर्थ है एक के बीतने पर अर्थात् एक के नष्ट हो जाने पर दूसरे की उत्पत्ति। प्रतीत्यसमुत्पाद बौद्ध–दर्शन का सार है।

अनित्यवाद/क्षणिकवाद

सर्वमनित्यम् यह बौद्ध – दर्शन का मुख्य सिद्धान्त है। संसार में जो कुछ है वह सब अनित्य है। रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार तथा विज्ञान सभी अनित्य हैं। विशुद्धि मार्ग में भी पंचस्कन्धों को अनित्य कहा गया है। जो अनित्य है वह दुःख है। इसी अनित्यवाद को बौद्ध – दार्शनिकों ने क्षणिकवाद का रूप दिया है। क्षणिक शब्द का अर्थ है – एक क्षण रहने वाला। जो वस्तु केवल क्षण भर रहती है वह क्षणिक कहलाती है। यह क्षणिकता प्रतीत्यसमुत्पाद पर आधारित है। संसार की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो परिवर्तनशील न हो। जिस प्रकार नदी की एक बूंद एक क्षण के लिए सामने आती है और दूसरे क्षण में विलीन हो जाती है, उसी प्रकार जगत् की प्रत्येक वस्तु क्षणमात्र के लिए ही अपना अस्तित्व बनाये रखती है। क्षणिक वस्तु का स्वरूप ही क्षणिक है जो उत्पन्न होने के बाद तुरन्त नष्ट हो जाता है।

कर्मवाद

बौद्ध धर्म–दर्शन में कर्मवाद की अपूर्व महत्ता है। कर्म ही मनुष्य का अपना है। भगवान् बुद्ध कहते हैं कि कर्म से ही मेरा जन्म हुआ है, कर्म ही मेरे बान्धव हैं और मैं कर्म प्रतिशरण हूं। कर्म के अनुसार ही संसार में जीवों की गति निश्चित होती है। कर्म से ही लोग ऊँचे और नीचे होते हैं। कर्म, विद्या, धर्म एवं शील का पालन ही उत्तम जीवन है। इन्हीं से मनुष्यों की पाप शुद्धि होती है केवल उच्च गोत्र होने या अधिक धन होने से पाप शुद्धि नहीं हुआ करती है।

निर्वाण

भगवान् बुद्ध के धर्म और विनय का सार निर्वाण है। जिस प्रकार नदियों का प्रवाह समुन्द्र की ओर होता है। उसी प्रकार बुद्ध की समस्त देशनाएं निर्वाण की ओर उन्मुख है। निर्वाण ज्ञानियों द्वारा अपने भीतर अनुभव करने की वस्तु है। इसे इसी जीवन में अनुभव किया जा सकता है। बोधि के द्वारा ही निर्वाण प्राप्त होता है। बिना बोधि के निर्वाण प्राप्त नहीं किया जा सकता है। जैसे बिजली पर्वत के पक्ष पर गिर कर बुझ जाती है वैसे ही मार पर विजय पाकर निवृत्ति पाई जाती है। भगवान् बुद्ध कहते हैं कि तृष्णा के बन्धन में बंधे हुए सांसारिक प्राणी इधर–उधर जन्म लेते कभी इस लोक से परलोक तथा कभी परलोक से यहां आते हैं। तथागत ने तृष्णा के क्षय के द्वारा मोक्ष का उपदेश दिया है जो साधक तृष्णा को छोड़ देता है, वह सब क्लेशों से हीन अमृत को प्राप्त कर लेता हैं जो तृष्णा से रहित है वही धर्म मार्ग के द्वारा दुःख के अन्त को प्राप्त कर लेता है।

बुद्धविजयकाव्यम् में प्रचुर मात्रा में बौद्ध दर्शन के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। इसमें सभी पहलुओं पर विचार करके काव्य को महत्वपूर्ण बना दिया हैं दार्शनिक सिद्धान्तों का विशद् वर्णन इसकी उपयोगिता को बढ़ाता है। इस काव्य में सरलतम ढंग से बौद्ध दर्शन का वर्णन है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. बुद्धविजयकाव्यम् – शान्तिभिक्षु शास्त्री
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास – डा0 कपिल देव द्विवेदी
3. शिक्षा के दार्शनिक आधार – बी0पी0 त्यागी ''आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर (राज0)
4. भारतीय दर्शन –
5. एशिया में बौद्धधर्म – ''डा0 दामोदर सिंह, मीनाक्षी प्रकाशन, दिल्ली''
6. स्वधर्म और कल्पना योग – सुरेश सोमपुरा, 8, अध्यार इन्डस्ट्रीयल एस्टेट सन मिल कम्पाउन्ड, लोअर परेल, बंबई–400013